तुलसी का काव्य: संकटग्रस्त मानव की सांत्वना

प्रोफेसर अलका पांडेय, हिंदी विभाग

लखनऊ विश्वविद्यालय , लखनऊ

तुलसीदास' 'सामाजिक संकट के द्रष्टा ' और, "वैयक्तिक संकट के भोक्ता' हैं। शोक, मोह, संदेह, भ्रम में से कोई भी दर्द अगर है. तो तुलसी का काव्य अपने शब्दों से, अपने मौन से, अपने संयोग से, अपने वियोग से, अपने केवल संकेत से मिटाने की सामर्थ्य रखता है। संघर्षरत पुरुषोत्तम में से नवीन पुरुषोत्तम का संधान करके, नैतिक और मूल्यपरक संघर्ष को रचनात्मक समर्थन देने का कार्य गो० तुलसीदास ने किया। 'शाश्वत काव्य-रचना यूं ही नहीं रचती है जब समय का प्रखर-बिंदु किसी रचना-मानस और किसी बड़ी प्रतिज्ञा संकल्पना के प्रखर बिंदु से अपनी परम ऊर्जा में मिलता या टकराता है, तब श्रेष्ठ रचना का जन्म होताहै।

फ़िराक़ ने तुलसी के विषय में शाह साहब से कहा था-

'मियां, एक लाख फ़िराक़ मिलकर भी तुलसी का मुकाबला नहीं कर सकते। तुलसी की कविता जब कान में पड़ती है तो ऐसा लगता है कि एक-एक शब्द के साथ कान में अमृत टपक रहा हो । '

तुलसी एक ऐसे फ़कीर हैं जो शब्द, छंद की भभूत लेकर विश्व भर को मंगल बांटने चला था-

वर्णानांमर्थ संघानाम् रसानां छंदसामपि । मंगलानां च कर्तारौ वंदे वाणी विनायकौ ।

तुलसी की कविता में गंगा की तरह' सब कहं हित ' में सतत सन्नद्ध है। जन-व्यापी, जन रंजक और जन-रक्षक तुलसी जनता की हारी- बीमारी, उत्थान-पतन ,सुख-दुःख की प्रेरणा एवं सहारा हैं।

'तुलसी को लोग समाज-सुधारक; परंपरा पोषक, भक्त, कवि, ज्ञानी जैसे कई टुकड़ों में अलग-अलग देखते हैं। क्या वे बता सकते हैं कि जिस शहद का आस्वाद वे लेते हैं, उसके किस कण में कौन से पुष्प, फल, वृंत, पत्र का रस है? मधुमक्खी ने स्वरस में मिलाकर उसकी तासीर और रसायन बदल दिया है और विभिन्न संग्रहण को एक समग्र रससत्ता दी है और इसमें 'कटु' भी शामिल है। हिस्सों में देखेंगे तो तुलसी नजर ही नहीं आएंगे। उनके व्यक्तित्व और सृजन में समग्र एकात्मता है, न कि विखंडित पाखंड।

तुलसी का समय वह समय था जब भारत का सांस्कृतिक सूर्य अस्त हो चुका था; चतुर्दिक अंधकार का साम्राज्य था। इस अंधेरे के नद को पार करने के लिए उन्होंने रामकथा रूपी सुदृढ नौका का सहारा लिया जिसमें साहित्य के साथ-साथ लोक और परंपरा का भी सुनियोजन था। यह रामकथा मात्र भक्ति, प्रेम, लीला के लिए न होकर देश, समाज तथा लोक कल्याण की भावना से भी युक्त थी।
'इस कथा के माध्यम से वेद की परंपरा और ऋषियों के संचित ज्ञान द्वारा लोगों के बाहर और भीतर के अंधेरों को हटाकर उजाले में परिवर्तित करना था-
'रामनाम मनि दीप धरु जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरो जो चाहसि उजियार ।" जब-जब भारतीयों पर संकट के अंधेरे आये तो तुलसीकीरामचरितमानस ने मनुष्य को आस्था, संकल्प और साहस दिया। फिर चाहे मुगलों का समय हो या गिरिमिटिया मजदूरों का प्रवास-काल अथवा आज भी कष्ट आने पर तुलसी की यही भक्ति, आस्था, संघर्ष और नैतिक बल की प्रेरणा प्रदान करती है। यह तुलसीकृत रामचरितमानस को पढ़ना- सुनना ही आध्यात्मिक खुराक के काम में आता है। भला वहाँ उन्हें शंकराचार्य के वेदांत की गुत्थियों को सुलझाने के लिए काशी के बड़े विद्वान कहाँ मिलने लगे ।
नागार्जुन ने इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास के विषय में कहा है-" हे महाकवि, तुमने अपने को मृत्युंजय बना लिया और वह भाषा जिसमें तुम्हारे सरल उद्गार निकले, उसे भी अमृतवाणी कहलाने का सम्मान प्राप्त हुआ है।"
तुलसी की 'गहि न जाइ अस अद्भुत बानी' है। आज की सबसे बड़ी सांस्कृतिक व्याधि--- भीतरी खोखलेपन को बाहरी पदार्थों से भरने की निरर्थक चेष्टा-- है। इसका भी निराकरण तुलसी के साहित्य में निरूपित जीवन दृष्टिको अपनाकर किया जा सकता है ।
आज की नयी पीढ़ी परंपरा से विमुख और सतही अर्थ में आधुनिक होती जा रही है। उसके भीतर हीनभाव पीड़ित परंपरा है तथा ऊपर से ओढ़ी हुई अविवेचित आधुनिकता है ।
इन परंपरा और आधुनिकता के बीच तालमेल न बिठा पाने के कारण वह विकृतियों का शिकार बन रही है। अतः आज तुलसीदास के साहित्य को पढ़ने की अधिक आवश्यकता है लेकिन अपप्रचार के कारण तुलसी को परंपरावादी संरक्षणशील माना जाता है। जबकि सत्य यह है कि मध्यकाल में भारतीय संस्कृति के सबसे बड़े सर्जक तुलसी ने रामकथा को अपना विषय इसीलिए बनाया क्योंकि उन्हें लोक को साहित्य परंपरा से सुपरिचित कराना था। केवल भक्ति, प्रेम, सौंदर्य और लीला का गान करना उनका उद्देश्य नहीं था,बल्कि

देश-समाज-काल के हितार्थ लेखन करना अभीष्टथा। लोक कल्याण के लिए बीच-बीच में अनेक मत-मतान्तर और मानवीय स्थितियों का भी ध्यान रखना था। जिसका उपयोग करते हुए उन्होंने अपने काव्य का सृजन किया । महत्वपूर्ण बात यह है कि निगम आगम में समाविष्ट ज्ञान को सरल बनाकर और लोक संपदा से सम्पन्न करके समय-बोध के साथ उन्होंने लोगों को दिया।

संसार में फैले अंधकार को हम सामान्य लोग कैसे आस्था-विश्वास और भक्ति के बल से पार कर सकते हैं इसका निदर्शन उनके काव्य में मिलता है। तभी तो अंग्रेजी राज में गरीब भारतवंशी जब विदेशों में गिरमिटिया मजदूर बनाकर ले जाये गए तो यही रामचरितमानस उनके घोर कष्टों को हरण करने का सम्बल बना। इसी भक्ति ने उन्हें क्षमता, संघर्ष और नैतिक बल दिया।

तुलसी का रामचरितमानस केवल धार्मिक नहीं है, वह सामाजिक, राजनीतिक और मानवीय है। यही हमारे अंधेरों को उजाले में बदलने की सामर्थ्य रखता है ।

तुलसी इस भोग -प्रधान बाजारवादी युग में भी प्रासंगिक है। वे भोग के स्थान पर कर्म को केंद्र में रखते हैं

'करम प्रधान बिस्व रचि राखा'

यह कथन आध्यात्मिक अभिप्राय से लिखा गया कथन, आज के रचना-समय का भी साक्षी है और सामाजिक पाठ-समय की भी मांग पूरी करता है। यह युगीन सत्य है जो लोक के कल्याणार्थ रचा गया है।

तुलसी को समकालीनता में पहचानने के लिए हमें उन्हें समग्रता में देखना होगा। तत्कालीन इतिहास तथा परंपरा की दृष्टि से उनकी क्रांतदर्शिता आंकनी होगी। निराला ने 'तुलसीदास' में उस सामंती युग को उकेरते हुए कहा है कि चारों ओर प्राणों को हरने वाली हर-हर ध्वनि सुनाई पड़ती है। 'इसे निराला ने जातीय अथवा साम्प्रदायिक अर्थ में नहीं, सत्ता ,उन्माद और आक्रामकता में परिभाषित किया है। इस घनांधकार में प्रकाश के उदय सा एक कवि का उद्‌भव सहसा उस कविता की याद दिला देता है जो पाब्लो नेरूदा ने पॉल रॉब्सन पर लिखी थी-

हमें जकड़ने के लिए जब बढ़ रहा था अंधेरा धरतीके भीतर बढ़ रही थीं जड़ें अन्धे पेड़ लड़ रहे थे रोशनी के लिए सूरज थर्रा उठा था जल गूंगा हो गया था और जानवर धीरे-धीरे बदल रहे थे अपना आकार धीरे-धीरे बना रहे थे स्वयं को वे जल और वायु के अनुकूल

तभी से तुम हमेशा आवाज रहे मनुष्य की आकार लेती धरती का गीत रहे

प्रकृति की गति रहे और लहर का संगीत रहे।

तुलसी का सृजन युग भक्ति का था। उस समय भक्ति विविध रूपा होकर चतुर्दिक, चारों दिशाओं में सामूहिक आवश्यकता बनकर फैली थी। यही भक्ति ही उस समय की मुमूर्षु जनता के लिए संजीवनी थी और समाज-सुधार का माध्यम भी। तुलसी का काव्य उस समय केवल धार्मिक

नहीं रह जाता जब वे कहते हैं-

जासु राजप्रिय, प्रजा दुखारी, सो नृप अवसि नरक अधिकारी।' यह उस समय की राजनीतिक स्थिति को देखकर तुलसी ने लिखा था और आज भी यह पंक्तियां प्रासंगिक हैं। राजा कैसा होना चाहिए? यहभी उन्होंने बताया है -

'मुखिया मुख सो चाहिए खान-पान कहुं एक, पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक ।"

तुलसी ने परंपरा से चले आते मूल्यों एवं आदर्शों को युगीन परिस्थितियों की कसौटी पर कसकर हमारे समाज का मार्गदर्शन किया। कलिकाल निरुपण हो या सामाजिक विखंडन, दरिद्रता हो अथवा अकाल की स्थितियां, सब कुछ 'उनकी सूक्ष्म दृष्टि के सामने से निकला है। जिसका चित्रण ही कर देना मात्र उनका मंतव्य नहीं है, अपितु अतीत एवं वर्तमान के आलोड़न से भावी जीवन का स्वस्थ प्रकल्प भी उन्होंने दिया है और यही उन्हें युगकवि की श्रेणी में खड़ा करता है।

चाहे तत्कालीन समय में शैव -वैष्णव के समन्वय की बात हो

शिव द्रोही मम दास कहावा, सो नर सपनेहुँ मोहि न भावा

अथवा

संकर प्रिय मम द्रोही, सिव द्रोही मम दास ,ते नर करहि कलप भरि, घोर नरक महुँ बास।

साथ ही सगुण- निर्गुण के विवाद को भी उन्होंने विराम देने के लिए- ज्ञानहिं भगतिहि नहिं कछु भेदा, उभय हरहिं भव संभव खेदा'।

यही शैली तुलसी को कवि अग्रगण्य एवं पूज्य बनाती है। दूसरों के लिए भी और अपने लिए भी वे स्थान छोड़ते हैं, जिससे सभी लोग अपने-अपने मत का

स्वेच्छा और स्वतंत्रता से पालन कर सकें । निर्गुण अंक (1,2) है तो सगुण अक्षर (एक,दो) अर्थात् निर्गुण कोड है ,तो सगुण डिकोड । जिसको जानना है, वह महत्वपूर्ण है अर्थात् ब्रह्म लक्ष्य है। निर्गुण, सगुण मार्ग है जिस पर चलकर साधक अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। वह किस मार्ग पर चले, यह उसको लोकतांत्रिक छूट प्राप्त है।

सगुण और निर्गुण उसी प्रकार से,'कहियत भिन्न-भिन्न 'है

जैसे शरीर के अलग- अलग अंग अनेक नामों से अभिहित किये जाते हैं लेकिन, भीतर एक ही आत्मा वास करती है। कबीर, निर्गुण होते हुए भी सगुण है (दुलहनी गावहु मंगलचार, आज मोरे घर आये राजाराम भरतार)। तुलसी की कवितावली में उनका राम, निर्गुण ब्रह्म बनकर आता है तब-

'केसव कहि न जाई का कहिये

देखत तव रचना विचित्र अति समुझि मनहि मन रहिये ।

शून्य भीति पर चित्र रंग नहिं तनु बिनु लिखा चितेरे--,'

सूर का उद्धव- गोपी संवाद भी प्रेम और योग का उत्कृष्ट रूप है। जहाँ योग-मद से गर्वीले उद्धव के समक्ष गोपियाँ प्रार्थी नहीं अपितु वकील की तरह अपनी बात रखती हैं क्योंकि तर्क द्वारा अथवा अहंकार द्वारा उस ब्रह्म की प्राप्ति असंभव है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल हों या मार्क्सवादी आलोचक रामविलास शर्मा अथवा कोई कथावाचक सभी ने तुलसी को विशिष्ट स्थान दिया। कारण उनकी उदात्त, सर्वसमावेशी, मानवतावादी सोच ही है। जही कबीर और सूर हैं, वहीं तुलसी भी उसी भूमि पर स्थित हैं। रास्ते अलग-अलग हो सकते हैं पर लक्ष्य एक ही है। साधना के उच्चतम धरातल पर ,सभी मार्गो पर चलने वाले साथी भावयुक्त होकर निष्पक्ष निश्छल और सरल वाणी में तटस्थ भाव से इस लड़ती-झगड़ती दुनिया

को समन्वय का मार्ग दिखाते हैं। तुलसी का अध्यात्म इस भीड़-भरी दुनिया के बीच से होकर गुजरता है। इसअध्यात्म रस को जीवनरस में बदलकर उन्होंने सबको दिया है। उनकी अध्यात्म दृष्टि लोक तक जाती है और लोकदृष्टि अध्यात्म की ओर लौटती है ।

आज का मुनुष्य 'उपलब्धि आकांक्षा' वाला है अर्थात् कम परिश्रम में प्रचुर ,पहले से श्रेष्ठ ,सुखद उपलब्धियो द्वारा अपनी सार्थकता और सफलता को प्रमाणित करना चाहता है।

आज उसकी यह अकांक्षा मनोवैज्ञान आवश्यकता बन गई है।जिसकी पूर्ति वह येनकेन प्रकारेण कर देना चाहता है चाहे उसके लिए प्रचंड संघर्ष ही क्यों न करना पड़े। इसका लाभ भी राजनीति, अर्थनीति और ज्ञान विज्ञान के रूप में समाज को मिला है। फलतः सामुदायिक कल्याण के किए बड़ी-बड़ी योजनाएं भी विभिन्न क्षेत्रों में क्रियान्वित की गई। तुलसीदास भी इनके विधायक पक्षों का स्वागत करते हैं। तुलसी स्वयं वैरागी थे किन्तु पूरे समाज को वैरागी नहीं बनाना चाहते थे।

तुलसी ने अपने युग की व्यथावेदना, को अपनी व्यक्तिगत-वेदना बनाकर आत्मनिवेदन किया है। आज के समय उसी को संत्रास -बोध कह सकते हैं जिससे आज का लगभग सभी लघुमानव उसे नितांत अकेले ही

भोगने को विवश है । जो मुक्तिबोध के रचना संसार में दहशतयुक्त रहस्य के रूप में विद्यमान है। तुलसी की सहानुभूति सदैव दीन हीन समाज के साथ रही है जो इस पीड़ा को भोग रहा है इसीलिए उन्होंनेयहां तक कह दिया है-'

जासु राजप्रिय प्रजा दुखारी

ते नृप अवसि नरक अधिकारी (मानस)

'रामराज्य' तुलसी के सपनों का राज्य' है जहाँ सभी सुखी हो; किसी को दुख न हो। यह राज्य इस धरती पर मिलना कठिन हो सकता है किंतु तुलसी का अभीष्ट यही है।

रामवरित मानस सुनकर, राम से जुड़कर व्यक्ति में 'उपलब्धिकांक्षा,' जागे, वह '

कपटी, कायर, कुमति कुजाती ।

लोक बेद बाहेर सब

भांती ।।

होता हुआ भी 'भुवनभूषण' बने "बुधि-विवेक विग्यान

निधाना' हो जाए, उसे देखकर लोग कह उठें- ,'कवन सो काज कठिन जग माहीं

जो नहि होई तात तुम्ह पाही ।"

(रामचरित मानस 4/30/5)

और यह असंभव को संभव बना देना ही तुलसी का अभीष्ट था-

समर बिजय रघुवीर के चरित जे सुनहि सुजान विजय, बिबेक, विभूति नित,तिन्हहिं देहिंभगवान

(मानस-6/121/6)

व्यक्ति विभूति सम्पन्न हो, विजयी हो किन्तु तुलसीका मानना है कि वह विवेकी और राम से जुड़ा भी हो, यह अनिवार्य है क्योंकि तभी वैयक्तिक कल्याण के साथ-साथ सामुदायिक कल्याण होना संभव है। यह सामुदायिक कल्याण तुलसी के 'रामराज्य निरुपण में स्पष्टतः देखा जा सकता है।

तुलसी की दृष्टि में सुख और दुख क्या है?

संत मिलन सम सुख जग नांहीं

और

नहिं दरिद्र सम दुख जग मांहीं' है।

आज मानव की अनियंत्रित भोग- लालसा ने उसे अनैतिक साधनों को अपनाने के लिए विवश कर दिया है, जो गो० तुलसी को सर्वधा अस्वीकार्य है क्योंकि यही तो राक्षसी-रावणी परंपरा है।

रामचरितमानस की कथा विधि -निषेधमय है ।क्या उचित है, क्या अनुचित । राम और रावण के चरित्रों के माध्यम से तुलसी ने जीवन के सभी क्षेत्रों में आचरणीय और, अकरणीय अथवा ग्राह्य, अग्राह्य का पूर्णतः निदर्शन किया है। यह संसार गुणदोषमय है। विवेकशील व्यक्ति उचित का संग्रह और अनुचित का त्याग करते हैं। उनका कथन है-

जड़ चेतन गुन दोषमय, बिस्व कीन्ह करतार

संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि विकार।

तुलसी का समय हिन्दू समाज के विघटन का समय था ।छोटे- छोटे संप्रदायों के आपसी संदर्भों और कर्मकांडों में सारी सामाजिक व्यवस्था टूट रही थी। जिसे देखकर तुलसी बहुत चिंतित थे, संभवतः यही कारण है कि उन्होंने वर्णव्यवस्था के समर्थन की बात की है। रामविलास शर्मा ने कहा है-' वर्ण-धर्म के समर्थन को ,तुलसीदास के विचारों को ऐतिहासिक सीमा 'स्वीकार किया जा सकता है, पर इसके बाद भी तुलसी जातिगत संकीर्णता के समर्थक नहीं थे।

तुलसी ने जातिवादियों को चुनौती देते हुए कहा है.-

,'मेरे जाति पांति न चहौं काहू की जाति पांति ।

मेरे कोऊ काम को, न हौ काहू के काम को।।

तुलसी ने स्पष्ट कहा है-'साह ही को गोत गोत होत है गुलाम को।,'

अर्थात् जो राम का गोत्र है, वहीं मेरा भी है।

तुलसी के राम ने ऐसे खलों, पापियों को उद्धार किया जिनकीसामाजिक स्थिति और वर्ण अच्छा नहीं था। वाल्मीकि, व्याथ, सबरी, गीथ, आदि ने राम की भक्ति को अपनाया और वह पवित्र हो गया। समाज के प्रत्येक वर्ग और वर्ण तक राम के

प्रति प्रेम पहुंच सके इसीलिए उन्होंने ज्ञान की तुलना में सुकर- सरल भक्ति रूपी गंगा प्रवाहित की। जिसभक्ति में सराबोर होकर प्रत्येक व्यक्ति सरलता से अवगाहन कर सके। इसके लिए किसी भी पुरोहित की सहायता की आवश्यकता नहीं है ।वह स्वयं ही उपासना द्वारा मुक्ति प्राप्त कर सकता है अर्थात् तुलसी ने सर्वजन सुलभ बनाया क्योंकि उनका मानना है,-

रामहिं केवल प्रेम पियारा जानिलेहु जोजाननिहारा'

वास्तव में तुलसी भक्ति या धर्म के संबंध में किसी कर्मकांडी संकीर्णता के कायल नहीं थे। उनकी दृष्टि में धर्म अधर्म क्या है?

परहित सरिस धरम नहिं भाई

परपीड़ा सम नहिंअधमाई।

आदि कवि नेराम-रावण युद्ध को मानसिक संघर्ष

के रूपक के रूप में चित्रित करते हुए कहा है कि मानसिक संघर्ष प्रत्येक मन में होता है। जब तक सद्वृत्तियां, असद्वृत्तियों की लंका को जलाकर नष्ट नहीं कर देतीं ,चित्त के राम को' विश्राम नहीं मिलता। सीता मात्र स्त्री नहीं है,

उसकी पवित्रता ,संचित तप और लोक शक्ति रूपा है ।यह लोकशक्ति दसइंद्रियों वाले रावण को मारकर ही बचाई जा सकती है।

तुलसी के राम आगम- निगम परंपरा वाले ही राम नहीं है उनके राम भाव प्रवाही संस्कृति के लोकनायक , करुणायतन और लोक सौंदर्य के रक्षक राम है। वे 'भए प्रकट कृपाला दीन दयाला' है। आर्य, अनार्य, कोल, भील, किरात निषाद आदि सभी के रक्षक है। सभी जन उनके अपने हैं। राम को प्रेम ही पियारा है- रामहिं केवल प्रेम पियारा।

जानि लेहु जो जाननि हारा ।।

राम के चित्रकूट आगमन की सूचना मिलते ही कोल-किरात आ जाते हैं- 'यह सुधि कोल किरातन्ह पाई।

हरषे जनु नवनिधि घर आई।'

15 वीं 16 वीं शताब्दी में भारतीय कोल- किरातों को पकड़कर काबुल में बेचा जाता था। अतः उस समय तुलसी द्वारा इन आभीर -जवन, किरात खस स्वपचादि को थाम द्वारा गले लगाना,

यह तुलसी के रचनाकार का मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचायक है।

कुछ प्रामाणिक अथवा लिखित जानकारी से ज्ञात होता है कि गोस्वामी तुलसीदास व्यक्तिगत जीवन में बहुत उदार थे इसीलिए कट्टरपंथी उनके विरुद्ध मिथ्या प्रचार भी करते थे ।

डोंम भक्त कवि नाभादास और रहीम से उनकी मित्रता हो अथवा उनके सहचरों में काशी के अहीर ,नाई ,केवट, गोंड ,जुलाहा आदि सभी वर्ग के लोग थे-

नाथू नापित केवट रामू । अरु रैदास खेलावत नामू।

बोधी गोंड हरी हरवाहू। दाढ़ी मोर जसन जोलहाहू॥

कहाँ कहाँ लगि नाम गनाई। कासी बिस्वनाथ प्रभुताई।"

गुसाई चरित' के अनुसार ब्राह्मण कवि केशवदास का स्वागत करने से इन्कार कर दिया था। जटायु' को दशरथ के समान तथा केवट को 'रामसखा 'कहकर तुलसी ने संबोधित किया।

सर्वप्रथम उन्होंने राम को अपने जीवन में जिया, फिर काव्य में अवतरित किया अत्यंत संघर्षशील जीवन में पेट और मन की आग की पीड़ा को उन्होंने बहुत सहन किया इसीलिए उनके काव्य में वर्णित संघर्ष निखर कर आता है और हमारे जीवन में बहुत गहरे तक उतर जाता है।

जीवन की विविधता को शब्दों में उन्होंने इस प्रकार से पिरोया है कि उनका काव्य सबसे प्रामाणिक जीवंत विश्वकोश बन गया है।

तुलसी के काव्य में जीवन के शब्द चित्र इस तरह से उभरते हैं कि सामान्य जनजीवन के लिए संदर्भवान हो उठते हैं ।जहां उपदेश कम है जीवन का यथार्थ चित्र अधिक है।इसीलिएकिसी के लिए भी जीवन से जुड़े इन सच्चे ,मार्मिक, मानवीय चित्रों को नकारना सर्वथा असंभव है ।उपदेश के अंश की, जीवन में कम उम्र होती है। इसीलिए शीघ्र ही वह संदर्भहीन हो जाता है, किंतु चित्रण अमर होता है ।इसीलिए तुलसी के काव्य में वर्णित चित्रण को हम देश काल के संदर्भ में देख सकते हैं

तुलसी ने स्त्रियों और निम्न जातियों के लिए पूजा के द्वार खोल दिये। सदियों से बंद द्वार खुलते ही स्त्रियां राम को देखने और मिलने उमड़ पडीं। आत्मविश्वास से परिपूर्ण आज की स्त्रियों, सीता से ठिठोली करते हुए पूछती है- 'सुमुखि कहहु को आहि तुम्हारे। अथवा

सांबरे से सखि रावरे को है' और सीता

'सुनि सुंदर बैन सुधारस साने सयानी हैं जानकी जानी भली '

की भाव-भूमि का साक्षात्कार करती है।

तुलसी का पूरा सृजन कर्म राम की लोक करुणा का सागर है। वनपथ पर सीता के कष्ट को देखकर -

'तिय की लखि आतुरता पिय की

अंखियां अति चारु चली जल च्वै'

इसके अतिरिक्त मृग-आखेट से लौटने पर, सीता को आश्रम में न पाकर ,वह विछोह से विक्षिप्त होकर पेड़ों, पक्षियों से सीता का पता पूछते हैं-

हे खगमृग हे मधुकर श्रेनी तुम देखी सीता मृगनयनी

तुलसी के समय सामंत- राजा बहुविवाह करते थे। अतः उन्होंने एकपत्नी व्रती राम का उदाहरण प्रस्तुत किया जो नारी को समान अधिकार देता है। नारी की पराधीनता के विषय में तुलसी का मंतव्य है-

'कत विधि सृजी नारि जग माही

पराधीन संपनेहुं सुख नाही ।

ऐसे तुलसी की करुणा, नारी की निन्दा कर ही नहीं सकती है।

ढोल, गंवार, सूद्र, पसु, नारी 'की बात वह समुद्र करता है, जहां राम द्वारा बहुत अनुनय विनय के बाद सर्वसमर्थ राम द्वारा तीन दिनों की प्रतीक्षा के बाद भी 'विनय न मानत जलधि जड़', से थककर राम बाण चढ़ा लेते हैं तब 'संधानेऊ प्रभु विसिख कराला' से भयभीत समुद्र अपने को

गंवार की श्रेणी में रखता है।

तुलसी के संसार में तारा सदृश नारी का आदर नहीं है किन्तु सीता, त्रिजटा तथा मंदोदरी का उच्च स्थान है। त्रिजटा, 'अधम ते अधम अधम अतिनारी', का मानो खंडन है क्योंकि वह सद्वृत्ति युक्त 'राम चरन रत निपुन विवेका' (सुंदरकांड दोहा 11)है। मंदोदरी का पातिव्रत धर्म ही उसे प्रेरित करता है कि बह रावण से कहे- 'मोर कहा कछु हृदय विचारहुँ'

"तुलसी जनता के कवि हैं। राम का सब कुछ लोक-मंगल के लिए है। राम की यही निःस्वार्थ कर्मलीला के कारण तुलसी ने कहा है-

राम सो बड़ो है कौन
मो सो कौन छोटो
राम सो खरो है कौन मोसो कौन खोटो।

समाज में किसी भी वर्ग को राम छोटा नहीं रहने देते फिर चाहे अहल्या हो, केवट हो, शबरी हो अथवा निषादराज । छोटे को बड़ा करना ही राम की पूरी राजनीति है। युद्ध नीति है, समाज नीति है।

तुलसी के विचार से इस भौतिक संसार का आधार परस्पर विरोधी शक्तियों की एकता और विकास की अन्तर्निहित क्षमता है क्योंकि-

'जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि' है।

यह संसार 'सीय राममय' है। सीता आदिशक्ति है विश्व की रचना, पालन संहार करने वाली हैं। वह सृष्टि के प्रतीयमान रूपों से आबद्ध भी हैं और इन गुणों से परे भी। राम पर-पुरुष ब्रह्म हैं, जो मानव शरीर धारण करके ब्रह्म के नियमों में आबद्ध हैं अतः इंद्रियगम्य है और इंद्रियातीत भी-

सगुन अगुन दुइ ब्रह्म सरूपा हैं।

तुलसी की भक्ति का यह दर्शन मनुष्य के लिए है। जो योगियों द्वारा भी प्राप्त करने में कठिन इंद्रयातीत ब्रह्म को इन्द्रियग्राह्य बनाता है। उस अलख' ब्रह्म को भी नाम 'साधना द्वारा सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।

जगत् ब्रह्म के द्वारा निर्मित है अतः काम्य है। संसार में रहकर अपने कर्तव्य को करते हुएभी उसे प्राप्त कर सकते हैं। संसार को झूठा मानकर संसार की वेदना को झुठलाने वाले तुलसी नहीं है। वह भी दमित जनता के प्रतिनिधि है जो- नीच, निरादर-भाजन, कादर
कूकर टूकनि लागि ललाई'
स्वयं झेल चुका है। उन्होंने भी संसार की यातना सही है। इसीलिए तुलसी की भक्ति संसार में रहने और संघर्ष करने
की भावना की भक्ति है, उससे भागने की नहीं।14 भक्त के समान साहसी भी दूसरा नहीं होता है क्योंकि वह
'सीस उतारै भुंइ धरै
तब पैठे घर माँहि 'होता है।
साथ ही 'मुकुति निरादर भगति लुभाने' वाला होता है क्योंकि उसे अपने प्रेम पर विश्वास है कि जिसने सृष्टिरचना की है वह उसके हृदय में ही नहीं है, अपितु उसके प्रेम के वशीभूत है। उसने 'अपने बस करि राखे रामू' कर लिया है।

संदर्भ-सूची

1- तुलसीदास : आज के संदर्भ में, डॉ० युगेश्वर, पृ०।

२- कवि परंपरा-निराला : शक्ति के विरुद्ध शक्ति साधना, पृ०83

3- वागर्थ, जुलाई 1997

4- कवि परंपरा- तुलसी से त्रिलोचन - प्रभाकर श्रोत्रिय भारतीय ज्ञानपीठ प्र., पृ० 13 श्रोत्रिय

5 तुलसीदास एक पुनर्मूल्यांकन - सं० अजय तिवारी, मृत्युंजय कवि तुलसीदास, आधार प्र. पंचकूला, पृ०67

6 तुलसी के हिय हेरि-विष्णुकांत शास्त्री, लोकभारती प्र., पृ०9

7 कवि परंपरा- तुलसी से त्रिलोचन, पृ०15

8- कवि परंपरा - तुलसी से त्रिलोचन, पृ०15

9 तुलसी विभिन्न दृष्टियों का परिप्रेक्ष्य, पृ०23

11.प्रगतिशील साहित्य की समस्याएं, पृ० 168

12तुलसी : विभिन्न दृष्टियों का परिप्रेक्ष्य, तुलसी का काव्य और प्रगतिशील जीवनमूल्य, पृ०40

13. सीय राममय सब जग जानी-कृष्ण दत्तपालीवाल ,वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 2214. तुलसीः एक पुनर्मूल्यांकन, तुलसी का समाज और ज्ञान, पृष्ठ 94.